भगवत् कृपा

साकार प्रगट ब्रह्म को जो पहचाने, वो परम् को पाये

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली द्विमासिक सत्संग पत्रिका

निजात्मानं ब्रह्मरूपं देहत्रयविलक्षणम्। विभाव्य तेन कर्तव्या भक्तिः कृष्णस्य सर्वदा ॥ शिक्षापत्री, ११६

वर्ष 35 अंक : 4 | 30.7.2012 सोमवार (जुलाई - अगस्त) | शुल्क – प्रति अंक : ₹ 10.00 वार्षिक : ₹ 50.00

आया, शाश्वत् 'रक्षा कवच' एवं गुरुहरि पप्पाजी महाराज के प्राकट्य का प्रार्थना पर्व...

रक्षाबंधन का पर्व जगत में भाई-बहन के निर्मल प्रेम-भावना का प्रतीक है। अंतर की भावना से भरपूर बहन अपने भाई को, रक्षा के लिए कामना करती हुई, अटूट धागे से बांध लेती है। दूसरी ओर भाई भी अपनी बहन को उसकी रक्षा करने का वचन देता है। यही भावना समय-समय पर, कहीं न कहीं, इस पवित्र रिश्ते का अनोखा एहसास कराती है। ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज अकसर कहते कि भावना सच्ची हो, तो उसको हाथ-पैर आते हैं। दिल की सच्चाई से किसी के लिए भी प्रार्थना करें, तो वह प्रभु को पहुँचती है।

हम सोचें कि जब प्रगट गुणातीत गुरु हमें 'शाश्वत् रक्षा कवचरूपी' राखी बाँधते हैं, तब सभी के भीतर शुद्धभावना प्रेरित करने वाली विभूति हमारे लिए कैसी कामना करती होगी! और... सहज ही **ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज** के आशीर्वचन कानों में गूँजते हैं –

हे महाराज! हे स्वामी! हे गुणातीत स्वरुपों... मेरे जीव, इंद्रियों-अंतःकरण को शुद्ध, पवित्र और शक्तिशाली बनाना! मैं आपका बालक हूँ। मेरी गल्तियों को माफ़ करना...

पू. हंसा दीदी के शब्दों में –

हमारी हमसे ही, यानि हमारे मन-इंद्रियों-अंतःकरण, जड़-स्वभाव से 'रक्षा' करना।

स्वामी की बातों में भी लिखा है –

जिस शिष्य में सरलता और स्थिरता हो व जिसके अंतर में सदैव शांत दिखाई दे, उस पर बड़े पुरुष की – संत की सहज प्रसन्नता ढलती है।

ऐसे शिष्य सत्पुरुष के अंतर की प्रसन्नता और सच्ची रक्षा के सदैव अधिकारी बनते हैं। सो, अन्य किसी प्रकार के विचारों के घेरे में घिरे बिना या पिष्टपेषण किए बिना, **२ अगस्त – 'रक्षाबंधन'** के पावन पर्व पर **'बालक'** एवं **'सरल'** बनने की प्रार्थना करते हुए, **पहली सितंबर** को आ रहे **गुरुहरि पप्पाजी महाराज के प्राकट्य पर्व** के सुअवसर पर, उनकी

दिव्य स्मृतियों में सराबोर होकर, उन्हें भक्तिअर्घ्य अर्पण करने के लिए तत्पर बनें।

- ❋ जिनकी स्थिरता, गति से अधिक तीव्र वेगयुक्त – ऐसे दिव्य प्राज्ञपुरुष,
- ❋ जिनका वर्तन, शब्दों से अधिक प्रेरणादायी और
  असरकारक – ऐसा प्रभावशाली व्यक्तित्व,
- ❋ निष्ठा, माहात्म्य, प्रशांति, प्रागल्भ्य, धैर्य, पारदर्शिता, सरलता, पवित्रता, सादगी, प्रामाणिकता, प्रभुता, दिव्यता, नियमितता, निश्चलता, सेवा की तत्परता, विश्वसनीयता, निर्लेपता, सूत्रात्मक रमूज़ जैसे दिव्य गुणों का समन्वयात्मक व्यक्तिस्वरुप,
  यानि– **प.पू. पप्पाजी !**

हर एक में उन्होंने केवल संबंध ही देखा, इतना ही नहीं, परंतु ***मेरे शुद्धिकरण के लिए ही जोगी इनका उपयोग कर रहे हैं...***

ऐसी अद्भुत दृष्टि और निर्दोषबुद्धि से उन्होंने सभी मुक्तों को केवल 'महाराज के रूप' में निहारा है। ऐसे गुणातीत स्वरुपों की विशिष्टताएँ सहज दिखती हैं, लेकिन तत्त्व से उन्हें पहचानना नामुमकिन है। उन्हें तत्त्व से पहचानने का एक मात्र मार्ग है, उनके द्वारा दिए गए किसी एक ब्रह्मसूत्र को जीवन का ध्येय बना कर, अंतर की सुरुचि से उस पर अमल करने में लग जाना। गुरुहरि पप्पाजी महाराज ने समय-समय पर ऐसे कई सूत्र हमें दिए हैं। पर, गुणातीत पुरुषों के अंतर के हार्द को जिसने समझा हो-पाया हो, वही उनके रहस्यों को समझा सकता है। वर्षों पहले **प.पू. गुरुजी** जब **श्री अक्षरपुरुषोत्तम सत्संग पत्रिका** लिखते, तब **१९७३** के अंक ५ में उन्होंने **गुरुहरि पप्पाजी महाराज** द्वारा **'आतमरव'** पुस्तक में लिखे एक सूत्र की गहनता को खूब स्पष्टता से समझाया है, जो श्रेयार्थी साधकों की साधना के लिए न केवल उपयोगी है, वरन् प्रगट सत्पुरुष के अंतर की प्रसन्नता पा लेने का एक रास्ता है। सो, आइए गुरुहरि पप्पाजी महाराज के प्राकट्य पर्व के आगमन पर, उन्हें प्रत्यक्ष मानते हुए, निम्न सद्विचार के एक-एक शब्द का मर्म समझ कर, उस पर अमल करने के लिए अंतर्मन से प्रार्थना करें...

'आतमरव' में **प.पू. पप्पाजी** ने लिखा है–

''कमज़ोरी दोष नहीं, लेकिन 'छल-कपट से भरी हरकतें' दोष हैं।''

वह क्या ?

तो, यदि हमें किसी का दोष नज़र में आए या किसी की क्रिया नाजायज़ लगे और चुभे,

तो यकीनन् मानना कि वह दोष मुझ में ही है, इसीलिए वह दिखाई दिया और उस पर ग़ौर किया गया।

वर्ना, यदि वह मेरे में न होता, तो वह नज़र में ही न आता। भीतर में है, सो ही बाहर दिखाई दिया।

यह बात शायद मानी न जाए और हमें अपने में महसूस भी न हो, लेकिन वह त्रुटि होगी ही।

शायद वह अचेतन मन में होगी, इसलिए दिखाई नहीं देती।

लेकिन, हमें यदि ऐसा मौका मिल जाए, तो हम भी उसी प्रकार ही मज़े लेने लग पड़ें –

जो सामने वाले में दोषरूप लगता है या नाजायज़ लगता है।

किसी का कुछ चुभता है या जँचता नहीं है व उसकी हम टीकाचर्चा करते हैं

वह तो हमें ऐसे रमणीय रागों को पोसने का मौका नहीं मिलता–

उसकी ईर्ष्या की वजह से हुई जलन के कारण ही है!!

सो, जब भी हम किसी के दोष या क्रिया देखें, वह चुभे और उसकी टीकाचर्चा करें,

तो जरूर मानना कि हम 'चोरी' ही कर रहे हैं।

उस मुक्त के द्वारा पू. बापा ने हमारे दोष-स्वभाव का जो दर्शन करवाया,

उसे नज़रअंदाज करके ढकने का ही प्रयास है।

इसे ही प.पू. पप्पाजी ***'छल-कपट से भरी हरकतें'*** कहते हैं।

हम सभी को ठग पाएँगे– शायद अपने आपको भी धोखा दे देंगे,

लेकिन महाराज को धोखा नहीं दे सकेंगे, वे धोखा खा जाएं ऐसे नहीं हैं।

सो, पहले से ही यदि सरल बन कर, दोष कबूल करके, टालने के लिए भजन नहीं करेंगे,

तो महाराज एक के बाद एक तीव्र प्रसंग खड़े करेंगे

और

आख़िरकार हमसे गिड़गिड़ा कर, अपना दोष कबूल करवा कर,

'मैं तुम्हारी गाय' कहलवा कर ही हमें छोड़ेंगे।

प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी भी कहते हैं कि ***'गुलाम' बनना ही पड़ेगा...***

जो जितना जल्दी बनेगा उसके लिए उतनी ही सरलता रहेगी।

जो जितनी अधिक अकड़ रखेगा, उसे उतनी ही अधिक मार खानी पड़ेगी।

तो अब, ***'अक्लमंद को इशारा और गधे को डंडा'*** – इस मर्म को थोड़े में समझ कर

- गुण की, क़ाबिलीयत की,
- क्रिया की, सेवा की,
- पुराने-नए की, सद्‌गुरुभाव की,
- स्थिति की, ज्ञान की,
- समझ की, स्वरूप को पहचान लेने की, मुक्तदशा की
- महाराज वश वर्तते हों, पाँच-पच्चीस जने मानते हों – पूजने लगे हों
  या
- अपने द्वारा अन्यों के काम होने लगे हों एवं दूसरों का विकास होता हो–

ऐसी सभी प्रकार की **'अस्मिता' को प.पू. काकाजी और प.पू. पप्पाजी जैसे प्रत्यक्ष स्वरूपों के चरणों में**

समग्रभाव से **लय करके, स्वामीसेवकभाव से उन्हें आगे रख कर,** किसी का कुछ भी देखे बिना,

हम में भरा है इसलिए – दिखाई तो देगा ही, लेकिन उसका मनन-चिंतन या टीकाचर्चा किए बिना,

केवल संबंध की महिमा समझ कर, **समग्र गुणातीत बाग के** सुहृद् बन कर,

सेवक के भी सेवक बन कर, इन स्वरुपों के चहेते बन जाएँ

ऐसी सुरुचि हम रखें और महाराज, स्वामी एवं प्रत्यक्ष स्वरुप अमाप बल दें यही अभ्यर्थना।

[મૂળ ગુજરાતી]

'આતમરવ'માં **પ.પૂ. પપ્પાજી**એ લખ્યું છે–

''નિર્બળતા એ દોષ નથી, પણ 'છછુંદરવિદ્યા' એ દોષ છે.''

તે શું ?

તો, આપણને કોઈકનો દોષ દેખાય - કોઈકની ક્રિયા અજૂગતી લાગે ને ખૂંચે,

તો ત્યારે ચોક્કસ માનવું કે એ આપણામાં જ છે અને એટલે જ એ દેખાયું ને નોંધાયું.

બાકી, જો એ આપણામાં ન હોય તો એ નજરમાં જ ન આવે. પણ, અંદર છે એટલે જ બહાર દેખાયું.

આ વાત કદાચ ન મનાય ને આપણામાં આપણને એવું કંઈ લાગે ય નહીં, પણ એ હોય જ.

કદાચ અવ્યક્તમાં હોય એટલે દેખાય નહીં.

પણ, જો આપણને એવો ચાન્સ મળી જાય, તો આપણે પણ એ જ રીતના લ્હાવા લેવા મંડી પડીએ–

કે જે સામામાં જોઈને આપણને દોષરૂપ લાગતું હોય કે અજૂગતું લાગતું હોય.

કંઈક ખૂંચે છે કે નથી ગમતું કે એની ટીકાચર્ચા થાય છે

એ આપણને એવી તક, એ રમણીય રાગો પોષવાની, મળતી નથી–

એના બળાપારૂપે ઈર્ષાએ કરીને જ હોય છે ! !

તો, જ્યારે ય આપણે કોઈનો દોષ કે ક્રિયા જોઈએ, એ ખૂંચે ને એની ટીકાચર્ચા કરીએ,

તો ચોક્કસ માનવું કે આપણે 'ચોરી' જ કરીએ છીએ.

એ મુક્ત દ્વારા પૂ. બાપાએ આપણા દોષનું–સ્વભાવનું જે દર્શન કરાવ્યું ,

તેની આગળ આંખ આડા કાન કરવાનો કે એ છાવરી લેવાનો જ એ પ્રયાસ છે.

એને જ પ.પૂ. પપ્પાજી ***'છછૂંદરવિદ્યા'*** કહે છે.

જો કે, આમ આપણે બધાને છેતરી શકીશું–કદાચ પોતાની જાતને ય છેતરીશું ,

પણ મહારાજને છેતરી શકવાના નથી, એ છેતરાય એવા નથી.

જો પહેલેથી જ સરળ બની, દોષ કબૂલી, ટાળવા ભજન નહીં કરીએ,

તો એવા એ (મહારાજ) એક પછી એક આકરા પ્રસંગો ઊભા કરીને

છેવટે રગરગાવીને આપણો દોષ કૂબલ કરાવી,

'હું તારી ગાય' કહેવરાવીને જ છોડશે.

પ.પૂ. હરિપ્રસાદસ્વામિજી પણ કહે જ છે કે, ***'ગુલામ' બનવું જ પડશે...***

જે વહેલો બને એને એટલી સરળતા ને જે અટંટાઈ રાખશે એને એટલો વધારે માર ખાવનો છે.

તો હવે, ***'તેજીને ટકોરો ને ગધેડાને ડફણાં'*** – એ સાનમાં સમજી

❋ ગુણના, આવડતના,

❋ ક્રિયાના, સેવાના,

❋ જૂના - નવાના, સદ્‌ગુરૂપણાના,

❋ સ્થિતિના, જ્ઞાનના,

❋ સમજણના, સ્વરૂપ ઓળખી લીધાના, મુક્તપણાના

❋ મહારાજ વશ વર્તતા હોય એના, પાંચપચીશ માનતા હોય એના

કે

❋ આપણા થકી બીજાંનાં કામો થતાં હોય ને બીજાંને સમાસ થતો હોય એના –

એમ સર્વ પ્રકારના **'જાણપણા'નો પ.પૂ. કાકાજી તથા પ.પૂ. પપ્પાજી જેવાં પ્રત્યક્ષ સ્વરૂપોના ચરણોમાં** સમગ્રપણે **લય કરી, સ્વામીસેવકભાવે એમને આગળ રાખી,** કોઈનું ય જોયા વગર, દેખાશે તો ખરું (આપણામાં હોય એટલે), પણ એનું મનનચિંતન કે ટીકાચર્ચા કર્યા વગર, કેવળ સંબંધનો મહિમા સમજી, **સમગ્ર ગુણાતીત બાગના** સુહૃદ્ બની, સેવકના ય સેવક બની, એ સ્વરૂપોને ગમતા બની જઈએ એ જ સુરૂચિ આપણે રાખીએ ને મહારાજ, સ્વામી તથા પ્રત્યક્ષસ્વરૂપો અમાપ બળ આપે એ જ અભ્યર્થના.

✡✡✡

अनुष्ठान शिविर...

धुन के राजा **ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज** ने हमेशा 'भजन' करने पर ही ज़ोर दिया। प.पू. गुरुजी ने उनसे विरासत में इसी क़वायद को ग्रहण करके हर प्रसंग पर **'भजन'** का ही बल लिया है और अपने संबंध में आए मुक्तों को भी मानो चस्का लगा दिया। करीब बाईस साल पहले, ए-१०३ के छोटे मंदिर में, पू. भाईस्वामिजी की प्रेरणा से प.पू. गुरुजी की निश्रा में, मई के महीने में प्रातः ६:३० से ८:०० तक **'अनुष्ठान शिविर'** की शुभ शुरुआत हुई थी। तब ऐसा लगता था कि १५-२० स्थानीय मुक्त इस शिविर में इकट्ठे होंगे, किन्तु देखते ही देखते आज करीब २००-२२५ मुक्त इस महीने की राह देखते हैं। अमदावाद, मुबंई में रहने वाले कई मुक्त तो शिविर की तारीख पक्की होते ही ट्रेन की टिकिट बुक करा देते हैं।

इस शिविर में सभी को धुन, भजन और प.पू. गुरुजी द्वारा व्यावहारिक और आध्यात्मिक सूझ तो मिलती ही है, साथ ही जो सत्संगी वैष्णव प.पू. गुरुजी के साथ खूब आत्मबुद्धि और प्रीति से जुड़े हैं, उनके लगातार एक महीने तक दर्शन भी होते हैं। एक महीना प.पू. गुरुजी का निरंतर समागम और एक-दूजे से रोज़ मिलने के बाद जब पूर्णाहुति का दिन आता है, तब सब के मुँह से एक ही बात निकलती है– ***'अब कल से घर पर शाम को क्या करेंगे ? अब तो शनिवार की सभा में ही सबसे मिलना होगा !'*** बात खूब सहज लगेगी, पर इसकी गहराई नापेंगे तो ख्याल आएगा कि भले ही सब स्वभावयुक्त हैं, लेकिन प.पू. गुरुजी ने कितनी आसानी से सभी को एक-दूसरे के प्रति खून के रिश्ते से बढ़ कर लगाव करा

दिया है, जो प्रसंग पर महसूस होता है और उसका दर्शन भी होता है। सच, **ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज को कोटि-कोटि धन्यवाद कि हमें ऐसे गुरुजी की अनमोल भेंट दी, जिन्होंने हर प्रकार से खुद घिस कर, सब में कुटुंबभाव का सत्संग कूट-कूट कर भर दिया।** सहज ही **ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज** द्वारा गाई भजन की पंक्ति कानों में गूँज उठती है –

अपने तुल्य भाग्यशाली अन्य किसी को मानें, वही भूल...

तो, बस ऐसी भूल हम कभी न करें, इसी प्रार्थना के साथ **१२ मई २०१२** को **पू. मल्कानी अंकल** एवं मुंबई के **प.भ. कुणालभाई** द्वारा उद्‌घाटित **'अनुष्ठान शिविर'** में **प.पू. गुरुजी** से मिली साधना मार्ग की कुँजियों को **'श्रवण, मनन, निदिध्यासन'** शीर्षक के अंतर्गत इस अंक से हासिल करें...

श्रवण, मनन, निदिध्यासन

* साधु जो आशीर्वाद देते हैं, उस वचन में हमें शंका नहीं करनी चाहिए। हमारी भलाई के लिए ही कुछ हो रहा होगा, हमें समझ नहीं आता।

* हमारी **'निष्ठा'** है –

  'प्रभु प्रगट हैं, सर्वोपरि हैं, हितकारी हैं, मंगलकारी हैं, पल में चाहें सो कर सकते हैं और वे हमारे हैं। सो, वे हमारा अहित होने नहीं देंगे।'

* **ब्राह्मीशक्ति से ऊपर कोई सत्ता है ही नहीं।** जिसे 'प्रभु सत्ता' कहते हैं, वो अपने घर की है, ऐसा समझ कर एक निश्चिंतता रखें। जैसे **पप्पाजी** कहते थे,

  'हमने भजन कर लिया है; नाउ लॅट हिम वर्क, स्टॉप योर एंजिन।'

  हम अपना एंजिन स्टॉप नहीं करते। इमिडियेट्‌ली किसी न किसी सोच-विचार में चले जाते हैं। ऐसा करने के बजाय नीरव होकर भजन करें। कोई न कोई हल बहुत आसानी से निकल आएगा। फिर हमें ख्याल आएगा कि जो हुआ था, वो हमारे फेवर में हुआ था।

* सच्चे संत कभी छलाव नहीं करेंगे। साधु ने जो कहा होगा, वो आख़िर सत्य होकर ही रहेगा। यह भरोसा हमें रखना पड़ेगा।

* जो सत्य बोले, वो 'सत्यवादी'; जैसे – युधिष्ठिर, महात्मा गांधी। पर, **प्रभुपाद ब्रह्मचारी** ने बहुत अच्छी बात की,

  'जो कुछ भी बोले, किन्तु उसका बोला हुआ सत्य हो जाए – वो 'सत्यवादी'।'

  यह एक विशिष्ट अर्थ है।

* संत की वाणी 'सत्य' है। इतना समझें कि भले ही हमें समझ नहीं आता, पर हमारे हित में ही होगा। यह विश्वास हमें रखना पड़ेगा। अपना काम हो जाएगा। हमारे हित में - श्रेय में वो जरूर होगा। अक्षरधाम मिल जाएगा!

* व्यावहारिक काम हमारी इच्छानुसार हों या न हों, पर जगत के फैल-फतूर, जगत की माया-प्रपंच वगैरह विषय सब भीतर में से टल जाएँ, उनकी आसक्ति भी चली जाए, वो बहुत बड़ा काम हो गया। **आसक्ति छूट जाए, तो आख़िरी जन्म हो जाएगा और सब दिव्य लगेंगे।**

* यह पूरा सत्संग गुणातीत बाग है। मुक्त भले ही स्वभावयुक्त दिखते हैं, लेकिन गुण से परे हैं; क्योंकि अल्टीमेट्ली इनका पूरा नियंत्रण तो ऐसे भगवत्स्वरूप संत का है, जो प्रकृति पुरुष से परे है – गुण से परे हैं। तो, इन सभी को वे 'गुणातीत' कर ही देंगे।

  यह मानना बड़ा मुश्किल है कि सभी गुणातीत हैं – सारा बाग 'गुणातीत' है।

* **मुक्तों को दिव्य मान लेंगे, तो हम निर्दोष हो जाएँगे।** प्रथम के ५८वें वचनामृत में महाराज की कही हुई यह बात है। हमारा कोई दुश्मन है ही नहीं।

* ऐसे दिव्य संत के पास अपनी कोई अहमियत नहीं है। **काकाजी** कहते थे,

  'तू सागर मैं लहरी।'

  हम किस प्रकार उन्हें राजी करेंगे?

  प्रकृति-पुरुष तक की कोई चीज इन्हें लुभा नहीं सकती है और हम प्रकृति-पुरुष से ऊपर स्वतः जा नहीं सकेंगे कि वहां से कुछ लाकर उन्हें दें। हम क्या देंगे, क्या करेंगे?

  गुण में रहने वाले, गुणातीतभाव को पाए हुए संत को कैसे राजी करेंगे?

  हाँ, खरगोश की भाँति, वे जो कहें, उसे करने की सिन्सियरली, ऑनेस्टली, सच्चे दिल से कोशिश किया करें। तो, वे राजी हो जाएँगे।

* सच्चा भगत भक्तों की कसनी सहेगा। *'ये कब तक?'* – ऐसा बोलेगा ही नहीं। असल में तो सच्चा भगत ऐसी कसनी में राजी होता रहता है। **हर एक अपने चहेते को टॉलरेट कर लेगा, जो उन्हें नापसंद हो, उनको नहीं करेगा।** ऐसा नहीं रखना, हरेक का एक सरीखा रखें।

* संत के अंदर निर्दोषबुद्धि रखें, मनुष्यभाव न आने दें। जैसे – **काकाजी** कहते थे,

  'सर्वोपरि स्वामिनारायण' – हम क्यों भूल जाते हैं? आख़िर सत्ता तो उन्हीं की चलने वाली है।

* स्वामी की बातें (योगीवाणी) हम एक महीना पढ़ेंगे। यह एक बड़ा रिफ्रेशर कोर्स जैसा है। खूब समझदारी से हम अपने पर लागू करेंगे, तो जब तक शिविर पूरी होगी, हम 'अर्चिमार्ग' पर दाखिल हो गए होंगे।

* ऐसी सोच में हम न डूबे रहें – *'हाय, मैं ऐसा हूँ।'* बल्कि – *'मुझे मिले हैं, वे समर्थ हैं। मैं इनका होकर रहूंगा, तो वे मुझे उठा कर लिफ्ट देकर ऊपर ले लेंगे।'*

* यह संभव है कि हम साथ में रहें, तब भी गुण न आएँ। हम सोचें कि कितने साल से हम साथ में हैं? किन्तु, साथ में रहकर –

  एक तो – संत की क्रिया मायिकभाव से देखते रहे।

  दूसरा – भक्तों के अंदर फलाना ऐसा, ढीकना ऐसा है, यह सोचते रहे। सो गुण नहीं आए। पूरी जिंदगी चली जाए, तब भी नहीं आएँगे। सेवा करें, चाकरी करें, तब भी गुण न आएँ। पर, निर्दोषबुद्धि से सेवा करें और सोचें कि इनके अंदर कोई कसर ही नहीं है, इनके अंदर सिर्फ प्रभु हैं ऐसा मानकर सेवा करें, तो गुण आते हैं।

* *'संत ने यह ठीक नहीं किया, उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए'* – यूँ साधु में ही मायिकभाव रखें -

दोष देखा करें, तो अपने अंदर गुण कहां से आएँगे?

* गुणातीतभाव को पाए हुए साधु पारस से पारस करें, ऐसे हैं और इसीलिए ऐसी चेइन कन्टीन्यूअस बनी हुई है। अपने यहां जो परंपरा अखंडित रही है, उसकी वजह यही है कि पारस जैसे गुणातीतभाव को पाए हुए संत हमें परंपरा से मिले हैं।
* बटर पेपर या प्लास्टिक की पतली-सी थैलियों के बराबर भी यदि बीच में अंतराय हो, तो हमारा शुद्धिकरण नहीं होगा। साधु के साथ–संत के साथ तनिक भी अंतराय नहीं होना चाहिए।
* **अतिशय सेवा** क्या? **निर्दोषबुद्धि!**
* गुणातीतानंदस्वामी ने तो कह दिया,
  'मंदिर का सारा काम अकेला करता हो, लाखों को सत्संग कराता हो, लाखों की सेवा करता हो, लेकिन मनमाना करता हो, तो कनिष्ठ है। वह कनिष्ठ है, इतना ही नहीं, ***उसके सिर पर विघ्न है*** *–ऐसा समझना।'*
* निर्दोषबुद्धि रखें, तो साक्षात्कार हो जाएगा। 'अक्षरधाम' क्या? अंतःकरण में शांति और शुभ संकल्प! बुरा विचार आएगा ही नहीं और होगी परम शांति की प्रतीति! जहाँ उद्वेग ही नहीं, वहाँ अक्षरधाम!
* भगवान को हम 'परोक्ष' मानें, तो वे गए; 'प्रगट' ही माने हों, तो गए ही नहीं हैं। हम कहीं भी हों, बाथरूम में भी हों–तो वे वहां भी हैं, मतलब वे सब देख रहे हैं। 'परोक्ष' मानते हैं, इसलिए मन की चोरी रहती है।
* कई कहते हैं न कि हमें आपके पास आकर बैठने का मन ही नहीं करता है। वो दिल से संत के साथ जुड़ा ही नहीं है।
  हम अपने मन के संग रहते हैं। हमें तो साधु के संग रहना है। **काकाजी** कहते थे,
  ''मन के साथ हमारा 'नो कोम्प्रोमाइज़'!''
* एक बार **पप्पाजी** ने कोठारीस्वामिजी की बात की थी। उन्होंने कोठारीस्वामिजी से कहा–
  'मैं देखता हूँ कि काकाजी आते हैं, तब कई संत ख़ानगी करने के लिए जाते हैं; मैंने तुम्हें कभी ख़ानगी के लिए जाते हुए देखा ही नहीं। तुम्हें कोई परेशानी नहीं है?'
  तब कोठारीस्वामिजी ने कहा,
  'परेशानी जो होती है, वो तो माइंड को होती है; उसे तो मुझे ही छोड़ना है। *मन भले ही चूं-चूं किया करे, लेकिन मैं उसे नहीं गिनूंगा।'*
  मुझे तो मेरे स्वामी ही प्यारे हैं, उनके संग ही रहना है, वे जो कहें वही करना है–**ऐसे जो जीते हैं, उनकी सारी जिम्मेदारी फिर वो साधु बिना कहे अपने सिर पर लेकर घूमते हैं।** उनकी फ़िकर साधु को रहती है।
* इस देह का जीव के साथ जैसा संबंध है, वैसा संबंध हमारा साधु के साथ होना चाहिए। जीव निकल जाए, तो देह गिर जाता है न?
* अपनी कसर, अपनी ग़लती पहचाननी चाहिए।
* **सच्चा विवेक क्या?** 'भगवान, संत और सत्संगी'–यही सत्य, बाकी सब मिथ्या है–यूँ मानना वो 'सच्चा विवेक'!

✡✡✡

दिल्ली-सत्संग के स्लो एन्ड स्टेडी बॅट्समेन प.भ. पकाई साहेब की अंतिम विदाई...

दिल्ली में सत्संग की शुरुआत से खूब अपनेपन से जुड़े **प.भ. रमणलाल पकाई साहेब २६ जून २०१२** को अमदावाद में ८९ वर्ष की उम्र में अक्षरनिवासी हुए। जून महीने के प्रारंभ से उनकी तबियत नादुरस्त रहने लगी थी। लेकिन, जैसा कि उनकी धर्मपत्नी पू. दमयंती बहन ने बताया ***१२ जून–प.पू. काकाजी महाराज*** *के* ***प्राकट्य दिन*** *पर तो वे खूब खुश थे। अमदावाद के हरिभक्तों के साथ मिल कर उन्होंने प्राकट्य दिन निमित्त केक कटिंग भी की...* फिर एक दिन घर पर अपनी बेटी से कहने लगे– *दरवाज़ा खोलो, भगवान स्वामिनारायण आए हैं।* हालत बिगड़ने के कारण अस्पताल में दाखिल हुए और १९ तारीख को आई.सी.यू. में पू. दमयंती आंटी से भी उन्होंने कहा– *पर्दे हटाओ, भगवान स्वामिनारायण और काकाजी आए हैं...* और वह दिन भी आया जब अपने दिए वरदान के मुताबिक, श्रीजी महाराज एवं ब्रह्मस्वरूप काकाजी महाराज अपने इस आश्रित को अक्षरधाम ले गए।

पूर्व के भारी संस्कार-पुण्य के कारण, प.भ. पकाई साहेब प्रगट के–प.पू. बापा और प.पू. काकाजी के–संपर्क में आ गए और मिलते ही वे प.पू. काकाजी के निजी बन गए ! निजी इस हद तक कि उनकी पहली पत्नी का देहांत हो जाने के बाद, प.पू. काकाजी ने उनके पुनर्विवाह के लिए खुद भागदौड़ की ! किसी भी व्यक्ति के दिमाग़ में यह बात बैठ ही नहीं सकती कि एक आध्यात्मिक विभूति ऐसे सांसारिक कार्य में इस हद तक जुट जाए और इससे भी अधिक जगत के रीति-रिवाज़ से विपरीत जाकर अमावस्या के दिन विवाह कराए। लेकिन प.पू. काकाजी जैसी समर्थ विभूति ने वह भी करवाया और **पू. दमयंती बहन–पकाई आंटी** के शब्दों में–

हमारी शादी को ४३ साल हुए; यह सब काकाजी ने ही संभव किया...

ऐसे प्रसंग पर एहसास होता है कि सच ही सूरज-चांद-तारे-नक्षत्र सब प.पू. काकाजी जैसी अखंड प्रभुधारक दिव्य विभूति के इशारों पर चलते हैं।

प.भ. पकाई साहेब यानि एक ख़ानदानी, सुलझे हुए-समझदार व्यक्ति। प.पू. काकाजी की परावाणी की कॅसैटों व सी.डी. में अकसर प.भ. पकाई साहेब का जिक्र आता है। हम तो संत को याद करें, पर संत हमें याद करें–इसे हमारा परम सौभाग्य ही समझना चाहिए। 'ब्रह्मप्रवाह' पुस्तक में प.पू. काकाजी द्वारा प.भ. पकाई साहेब को लिखे पत्रों से हमें प.पू. काकाजी के साथ उनके अति घनिष्ठ संबंध होने का दर्शन होता है। प.पू. गुरुजी भी कई बार पुराने प्रसंग याद करते हुए बताते हैं–

* प.पू. काकाजी ने दिल्ली आते हुए प.पू. गुरुजी एवं संतों को आज्ञा की थी कि वहाँ प्रत्येक रविवार को सत्संग सभा किया करना। तब दिल्ली में केवल

पू. नवलबा का ही एक सत्संगी परिवार था और उस परिवार में भी केवल स्त्रियाँ ही थीं। फिर भी प.पू. गुरुजी अपने साथ के साधु एवं सेवक के साथ हर रविवार को पू. नवलबा के घर धुन-सत्संग सभा के निमित्त जाते कि शायद कोई सत्संग करने के लिए आ जाए; पर कोई आता ही नहीं था। एक बार पू. नवलबा के घर जाते हुए प.पू. गुरुजी ने मन ही मन सोचा– *'ऐसा कब तक चलेगा कि हम पू. नवलबा के यहाँ धुन करके, बस अच्छा खाना खाकर चले जाएँ? आज धुन करते हुए प्रार्थना करेंगे और यदि आज कोई नहीं आएगा, तो प.पू. काकाजी से बात कर लेंगे और अगली बार से रविवार की सभा के निमित्त यहाँ आना बंद कर देंगे।'*

ऐसा सोच कर धुन की और... धुन के बाद जैसे ही आँखें खोली तो सामने प.भ. रमणभाई पकाई साहेब बैठे थे। सो, प.पू. गुरुजी उन्हें ***'धुन के पकाई'*** भी कहते और वे धीरे-धीरे सत्संग में ओतप्रोत हो गए।

* शुरुआत में जब देहरादून एक्सप्रेस से प.पू. गुरुजी एवं संत दिल्ली आते, तब एक प.भ. पकाई साहेब ही थे, जो उन्हें स्टेशन लेने आते। स्टेशन से उन्हें 'भारत साधु समाज' छोड़ कर, दोबारा दस बजे के करीब आकर प.पू. गुरुजी एवं संतों को राशन वगैरह दिलवाने के लिए खारी बावली ले जाते। फिर पू. नवलबा के यहाँ से और 'गुजराती समाज' की कॅन्टीन से रसोई के बर्तन दिलवाते। इसी प्रकार जब प.पू. काकाजी दिल्ली आते और उन्हें श्री नंदाजी के यहाँ या और कहीं जाना-करना होता, तो प.भ. पकाई साहेब अपनी गाड़ी में ले जाते... ऐसी भक्ति करके उन्होंने प.पू. काकाजी का हृदय जीत लिया था। शुरुआत में जब दिल्ली में कोई सत्संगी नहीं था, उस समय प.भ. पकाई साहेब ने जो साथ दिया, उसे दिल्ली का सत्संग समाज कभी भी भुला नहीं सकेगा।

आज भी प.पू. गुरुजी उनके साथ बिताए पल और उनकी भक्ति, दृढ़ निष्ठा, कसनी, समझदारी को याद करते रहते हैं। प्रकरण २ की ५०वीं स्वामी की बात में लिखा है –

'स्वयं से (सेवा) थोड़ी हो सके तो थोड़ी करना और हाथ जोड़ लेना। लेकिन, छल नहीं करना और बचने हेतु इधर-उधर खिसक नहीं जाना...'

यह बात उनके जीवन में यथार्थ सिद्ध होती दिखाई दी है। **प.पू. काकाजी** ने भी उनसे कहा था–

सेवा कर सको तो करना, लेकिन 'असेवा'- अवगुण तो लेना ही नहीं।

निर्दोषबुद्धि के इस ज्ञान को उन्होंने अंत तक पकड़े रखा और प.पू. काकाजी की प्रसन्नता पा ली। १९७० में एक काग़ज़ में तो **प.पू. काकाजी** ने उन्हें आशीर्वाद दिया –

'...तुमने जीव में प्रगट की निष्ठा दृढ़ कर ली, तो गृहस्थाश्रम में भी जनक-अंबरीष जैसी स्थिति हो गई। यह सब कुछ संतों की सेवा का फल है...'

कितना बड़ा आशीर्वाद बख़्शिश में मिल गया? मालिक का कोई मालिक है क्या?

इसलिए दिल्ली मंदिर में १२ मार्च १९९८ को जब उनका अमृतपर्व मनाया गया और सदैव के लिए अमदावाद जाकर रहने के लिए विदाई समारोह किया गया, तब प.पू. गुरुजी ने उन्हें 'सत्संग के स्लो एन्ड स्टॅडी बॅट्समेन' कह कर नवाज़ा। और तो और, उनके

लिए जो केक बनवाया गया, उस पर, सांकेतिक रूप में, बॅट भी बनवाया था।

अमदावाद जाने के बाद भी उन्होंने, वहाँ के वड़ील के रूप में, अमदावाद के हरिभक्तों को महिमा की बातें करके दिव्यभाव दृढ़ कर लेने की राह पर अग्रसर किया। और... आज प.पू. गुरुजी के अथक् परिश्रम और प.भ. पकाई साहेब जैसे मुक्तों की इस सेवा के फलस्वरूप, अमदावाद में कुटुंबभाव से जीता एक छोटा-सा दिव्य परिवार अस्तित्व में आया दिखाई दे रहा है।

प.भ. पकाई साहेब को सिर्फ बेटियाँ; लेकिन उन्हें इतने अच्छे ससुराल मिले कि प.भ. पकाई साहेब के अंत समय में उपस्थित उनकी तीनों बेटियों एवं उनके परिवारजनों ने, उनकी खूब सेवा करके, उनके आशीर्वाद प्राप्त कर लिए और पू. दमयंती आंटी को कोई कमी महसूस नहीं होने दी। आज के युग के प्रवाह में ऐसी सेवा-भावना देख कर दिल नतमस्तक हो आता है और एहसास होता है कि जाने-अनजाने में भी यदि सच्चे संतों की सेवा की गई हो, तो उस सेवा का फल प्रभु खूब ही दे देते हैं। वाकई, जैसा कि **प.पू. काकाजी** अकसर कहते–

''भगवान स्वामिनारायण ने उनका अनन्यभाव से आसरा करने वाले एवं उन्हें अखंड धारे संत के प्रति अडिग निष्ठा से जुड़े भक्त को 'भुक्ति, मुक्ति व आध्यात्मिक स्थिति' सुलभ कर दी है।''

यह कथन प.भ. पकाई साहेब में चरितार्थ हुआ है। सो, समस्त गुणातीत समाज की ओर से प.भ. पकाई साहेब की भक्ति को अंतर से नमन करते हुए श्रद्धांजली अर्पण !

✡✡✡

भजन

(राग: तूफान मेल... दुनिया ये दुनिया, तूफान मेल...)

प्रभु से मेल...
सत्संग जीव का कराए प्रभु से मेल
जो भी सत्संग से जुड़ जाता
फिर उसको कुछ और न भाता
संत तो प्रभु ओर मोड़ दे पटरी -२
भागे वैसे ही रेल, प्रभु से मेल !
सत्संग जीव का कराए प्रभु से मेल !

गुरुमुखी सत्संग जो करता
ब्रह्मभाव उर में प्रगटाता
गुरुकृपा से फिर, स्थिति वो पाए -२
कभी न होता फेल -२, प्रभु से मेल
सत्संग जीव का कराए प्रभु से मेल।

गुरुजी क़वायद यही कराएँ
कुटुंबभाव सत्संग में जगाएँ
भेद दृष्टि टालें, हैं सभी हमारे
कर लो दिलों का मेल -२, प्रभु से मेल
सत्संग जीव का कराए प्रभु से मेल।

जो जितना है समर्पण करता }- २
उसी मुताबिक सुख है पाता
प्रगट से...
प्रगट से जुड़ जाएं हम ऐसे -२
पेड़ से लिपटी ज्यों बेल, प्रभु से मेल
सत्संग जीव का कराए प्रभु से मेल... -२

व्रतोत्सवसूची

(1)	दि.	29.7.'12,	रविवार	—	पवित्रा एकादशी – व्रत *(ठाकुरजी को पवित्रा के हार पहनाने।)*
(2)	**दि.**	**2.8.'12,**	**गुरुवार**	**—**	**श्रावणी पूर्णिमा – रक्षाबंधन** *(सुबह 8:30 से 10:00 प.पू. गुरुजी से शाश्वत् रक्षाकवच प्राप्त करने के लिए महापूजा-प्रार्थना करेंगे।)*
(3)	दि.	8.8.'12,	बुधवार	—	रांधण छठ (षष्ठी)
(4)	दि.	9.8.'12,	गुरुवार	—	शीतला सातम (सप्तमी)
(5)	दि.	10.8.'12,	शुक्रवार	—	**जन्माष्टमी** – व्रत
(6)	दि.	13.8.'12,	सोमवार	—	एकादशी – व्रत
(7)	दि.	15.8.'12,	बुधवार	—	भारत का स्वातंत्र्य दिन
(8)	दि.	17.8.'12,	शुक्रवार	—	श्रावण मास – समाप्त
(9)	दि.	27.8.'12,	सोमवार	—	एकादशी – व्रत
(10)	दि.	1.9.'12,	शनिवार	—	**ब्रह्मस्वरूप प.पू. पप्पाजी महाराज का प्रागट्य दिन**
(11)	दि.	12.9.'12,	बुधवार	—	एकादशी – व्रत

(Air Mail)
'**Bhagwatkripa**' Bimonthly Magazine – Despatched on 15th of alternate months
If undelivered please return to :— *Printer, Publisher, Editor :* **SHRI PRABHAKER RAO** ***FOR*** **YOGI DIVINE SOCIETY- DELHI**
'Taad-dev', Kakaji Lane, Swaminarayan Marg, Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 2730 1327
Printed at : **D.K. FINE ART PRESS (P) LTD.,** A-6, Community Centre, Nimri Colony, DELHI-110 052